समुदाय व संरक्षण

अंक ४, नं.१ दिसंबर २०११

सूचि

१. समाचार एवं विश्लेषण
- महिको/मोनसेन्टो तथा उनके भागीदारो पर बी.टी. बैंगन को बढावा देने में किये गये जैवविविधता संरक्षण कानून उल्लंघन के खिलाफ राष्ट्रीय जैवविविधता प्राधिकरण द्वारा कार्यवाही।
- विविधता की पैदावार।
- कश्मीर के ३२०० हेक्टयर पर जैविक खेती एवं भविष्य में बढने की संभावना।
- संयुक्त राष्ट्र रिपोर्ट : जैविक खेती से अगले दस वर्षों में दुगने उत्पादन की संभावना।
- कर्नाटक के बिलिगिरी रंगास्वामी मंदिर वन्यजीव अभयारण्य में सोलिगाओ को समुदायिक वनाधिकार मिला।

२. कार्यशाला एवं सम्मेंल
- विश्वसे खतरनाक कीटकनाक इंडोसुल्फान का चरणबद्ध तरीके से अंत।

३. विषय अध्ययन
- स्थानिय बीजों की सुरक्षा के लिये 'लोकपंचायत' द्वारा आंदोलन की शुरूआत।
- वनस्त्री : मलांद, वन–बाग एवं बीजों को संग्रह करने वाला संगठन।

४. अंतर्राष्ट्रीय समाचार
- इथोपिया के गंबेला जंगल में भारतीय कंपनी ने जमीन का पट्टा (लिज) हासिल किया।

विशेषांक .... कृषि में जैवविविधता

संपादकीय

१६ अक्टूबर को विश्व खाद्य दिवस मनाया गया

खाद्य एवं कृषि संस्थान (एफ.ए.ओ.) द्वारा जारी की गयी हाल कि एक रिपोर्ट के अनुसार पूरी दुनियां में लगभग ९२ मीलियन लोगों को पर्याप्त भोजन नही मिलता है। वही खाद्य नीति शोध संस्था द्वारा जारी वर्ष–२०११ में विश्व खाद्य (भूख से जुडें) सूचकांक[१] में भारत को चिंताजनक स्थिती वाले देशों की श्रेणी में रखा गया है। इस सूंची में शामिल ८१ देशों में से भारत का स्थान ६७ वां है।

सब (उप) – सहारा अफ्रिकी देशों की तरह भारत के आधे बच्चों को उपयुक्त भोजन एवं स्वास्थ सुविधा उपलब्ध नही है। अन्य सार्क देशों की तुलना में भारत का स्थान; श्रीलंका (३७), म्यामार (४१), नेपाल (५५) एवं पाकिस्तान (५९) के बाद आता है जबकि बंगलादेश थोडा नीचे ७० वें स्थान पर है।

२००३ में, विश्व के दक्षिण के देशों में भोजन की कमी के कारण दंगे हुए थे। २००८ में खाद्य (भोजन) से जुड़ी चीजों की कींमते, २००७ की कीमतों के स्तर से दो गुनी थी, जिसके लिये निम्न कारणों को बताया गया था –

१) ४० वर्षो में विश्व स्तर पर प्रति व्यक्ति मीट की कपत दो गुनी होने से सोयाबीन एवं मक्के का बहुतायत में मीट उत्पादन में उपयोग।
२) नयी उदारवादी नीति के चलते मुक्त बाजार के खाद्य उत्पादन एवं वितरण के क्षेत्र में आने से गरीब देशों में खाद्य उत्पादन में कमी आना।
३) खाद्य उत्पादन के विभिन्न पहलुओं पर जिसमें कीटनाशको एवं उर्वरको के उत्पादन; अनाज के भंडारण एवं सवर्धन शामिल है. एकाधिकार को बढावा देना।
४) मक्का, सोया एवं पामतेल की ज़्यादा से ज़्यादा मात्रा में कृषि इंधन के उत्पादन में उपयोग में लाना।
५) खाद्य–बस्तुओं के विश्व बाजार में अप्रत्याशित बदलाव आना जिस पर किसी ने विचार नही किया है।

भारतीय कृषि में सरकारी नियंत्रण में कमी का इस क्षेत्र की उपलब्धता में क्या भूमिका रही है?

राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्युरों (कार्यालय)[२] के आकंडे बताते है कि १९९५–२०१० (भारत द्वारा नयी उदारीकरण मांडल व्यवस्था पर आधारित आर्थिक विकास को अपनाने के ४ साल बाद) के बीच पूरे देश में २,५६,९१३ किसानों ने आत्महत्या की थी[३]। उपलब्ध आकडों के अनुसार एक चौथाई मीलियन आत्महत्याएँ, पिछले १६ वर्षो के दौरान मात्र पांच राज्यों – महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश तथा छत्तीसगढ में दर्ज की गयी। वर्ष १९९५ में राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्युरों[४] (एन.सी.आर.बी.) ने जब पहली बार किसानों की आत्महत्या की पहली सूंची बनायी तो पाया कि इन बडे पांच राज्यों का प्रतिशत ५६.०४ था। वही जहाँ २०१० में देश में आत्महत्याओं की संख्या में कमी आयी तब इन राज्यों का प्रतिशत बढकर ६६.४९ हो गया।

इस विषय पर महाराष्ट्र की स्थिति अधिक चिंताजनक है। आंकडे बताते है कि वर्ष १९९५–२००२ के बीच २०,०६६ किसानों ने आत्महत्या की थी जबकि अगले आठ वर्षो में यह संख्या बढकर ३०.४१५ हो गयी। बाद के समय में वार्षिक औसत बृध्दि दर १,१५५ प्रतिवर्ष थी। इसी समय में प्रधानमंत्री द्वारा सहायता अनुदान, कर्जमुक्ति एवं अन्य उपायों के द्वारा दिया गया था। वर्ष १९५५ से २००२ के बीच आत्महत्या का आंकडा १,२१ १५७ था जो अपनेआप में चिंताजनक है। इस आंकडे में कृषि से जुड़ी आत्महत्याओं की संख्या में कमी तो है परन्तु तश्यों से पता चलता है कि १९९१ की जनगणना की तुलना में २०११ के जनगणना के आंकडे बताते है इस दौरान सात मिलियन से ज़्यादा जनसंख्या कृषि क्षेत्र से हटी है। दूसरे शब्दो में कहा जा सकता है कि कृषि क्षेत्र में आत्महत्याएँ इस क्षेत्र की समस्या के दौर में बढ़ी है जबकि इसी दौर में किसानों की संख्या में कमी आ रही है[५]। वर्तमान कृषि मंत्री इसी राज्य से आते है एवं पिछले उन १० वर्षों में से ६ वर्ष इनका कार्यकाल रहा था। अक्टूबर २३, २०११ को इंडियन एक्सप्रेस समाचार पत्र को दिये गये एक साक्षात्कार में जब उनसे राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा बिल (एच.एफ.एस.बी.) के बारे में पूछा गया तो उन्होने १.१५–१.२० लाख करोड खाद्य अनुदान के बारे में चिंता एवं दु:ख जताते हुए बताया की ''इससे पूरी अर्थव्यवस्था प्रभावित होगी..... इतना अनुदानों में खर्च किया जायेगा तो विकास के लिये क्या बचेगा?'' ऐसा विचार यदि माननीय कृषिमंत्री का है जिनके ऊपर कृषि संबंधी समस्या को दूर करने की जिम्मेदारी है।

ऐसा लगता है कि वे देश की जनता के प्रति जिम्मेदार कम आर्थिक योजना आयोग के प्रति अधिक है जिसके प्रमुख मोंटेक सिंह अहुलुवालिया ने कुछ दिन पहले ही सर्वोच्च न्यायालय में हलफनामा दायर करते हुए देश को सुझाव दिया था कि ग्रामीण क्षेत्र में जो रू. २५ और शहरी क्षेत्र में रू. ३२ से कम रोजाना कमाते

१. देखें : http// www. indianexpress.com/news/lead-to-feed-is-prize-message/870372
२. राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरों मदुर्घटना से मौते एवं भारत में आत्महत्याऐं १९९५–२०१०
३. देखे, http:// www. the hindu.com/opinion/columns/sainath/article 257740.oce
४. देखें, http:// www. thehindu.com/multimedia/article/00820/farm.sucides-All- 820598a.pdf
५. देखें, http:// www. thehindu.com/opinion/columns/sainath/article2577635.ace

है वो गरीबी रेखा के नीचे आते है। यह हलफनामा उस समय आया जब महंगाई दर से लोग परेशान है और ६० मीलियन टन आनाज भारतीय खाद्य निगम (एफ.सी.आई.) के गोदामों में भरा पड़ा है। इतनी मात्रा में अनाजों का भंडारण बताता है कि सरकार स्वयं कीमतों को बढ़ावा देना चाहती है। दूसरी ओर मोंटेक सिंह अहुलुवालिया ने गरीबों के अनुपात का अनुदानों से किसी भी सबंध को अलग करने का प्रयास किया है (ऐसा माना जाता है कि कृषि मंत्री इससे पूरी तरह से सहमत नही है)।

अभी तक केंद्र सरकार के सभी कार्यक्रमों जैसे जन वितरण प्रणाली (पी.डी.एस.), पेंशन अदि के लिये आर्थिक सहायता का आधार गरीबी का अनुपात रहा है। हालही में भारतीय प्रधानमंत्री ने अपने कॅानस दौरे के समय पत्रकारों से बातचीत के दौरान पेट्रोल कीमतों में हुई बृध्दि के विषय में कहा कि ''नीति–निर्धारको को, बाजार को अपने स्तर पाने के लिये छूट देना चाहिऐं। परिवर्तन की दिशा बिल्कुल साफ है हमे किमतों से नियंत्रण को अधिक से अधिक हटाना चाहिऐं।''

भोजन का अधिकार अभियान (आर.एफ.सी.) की मुख्य कार्यकारी समूह ने मोंटेक सिंह अहुलुवालिया को भेजे गए एक खुले पत्र[६] के ज़रिये योजना आयोग के हलफनामे को ''एक ऐतिहासिक महत्वपूर्ण बताया जो घमंड एवं गरीबों की आवहेलना के साथ'' ही खाद्य–सुरक्षा बिल के विचार के साथ भी मज़ाक था। योजना का आधिकार अभियान (देश में इस मुद्दे से जुड़े व्यक्तियों एवं जनसंगठनों का एक समूह) ने खाद्य एवं उपभोक्ता मंत्रालय द्वारा तैयार खाद्य सुरक्षा बिल[७] के प्रारूप की कडी निंदा की क्यों कि इस बिल के प्रारूप में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रदत्त आधिकारों को कमजोर किया गया, सरकार की जबाबदेही एवं जिम्मेदारी को कम किया गया एवं लोगों के जन–वितरण प्रणाली के आधिकार को खाद्य सुरक्षा भत्ते के तहत नकद भुकतान द्वारा रोका गया। इन आधिकारों को गरीबी रेखा से नीचे के नागरिकों से जोड़ा गया जिसमें भूख की सीमा की अनदेखी की गई। आर.एफ.सी. के अनुसार जन वितरण प्रणाली की जगह नकद भुगतान को लागू करने से परिवारों की खाद्य सुरक्षा प्रभावित होने के साथ ही उत्पादन, खरीद एवं भंडारण की व्यवस्थाएं भी प्रभावित होगी। इससे सबसे ज़्यादा प्रभावित किसान होंगे। सरकार उनसे खरीद नहीं करेगी तो जन वितरण प्रणाली की दुकानों को चलाने की ज़रूरत नहीं रहेगी, और किसान न्यूनतम समर्थन मूल्य से वंचित रहेंगे जो कि फसल उगाने का एक महत्त्वपूर्ण लाभ है। किसानों को अपना फसल बेचने के लिए बाजार की दया पर निर्भर होना पड़ेगा, उन्हे कम कीमत पर अनाज बेचने को मजबूर होना पड़ेगा, और इधर भारतीय खाद्य–निगमों के गोदामों की आवश्यकता नही रहेगी। आर.एफ.सी. के अनुसार ऐसा सोच समझकर किया गया है ताकि देश में संगठित खुदरा बाज़ार के लिए रास्ता बनाया गया है। बहुप्रतिक्षित ५१ फिसदी (प्रतिशत)[८] बहुत्पादों के क्षेत्र में सीधे विदेशी पूंजी निवेश का निर्णय केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा कभी भी किया जा सकता है। खाद्य अनाजों की जगह नगद देने के सरकार की पहल को उस निर्णय के साथ जोडकर देखा जाना चाहिए जिसके तहत सरकार अंतराष्ट्रीय पूंजी पाने के लिये खुदरा व्यापार के क्षेत्र में प्रत्यक्ष पूंजी निवेश को लाना चाहती है। स्पष्टत: ऐसा लगता है कि सरकार का लक्ष्य खर्च को कम करना, जिम्मेदारियों को कम करना एवं प्रचलित व्यवस्था को खत्म करना है। अच्छी खबर यह है कि राज्य सरकारों ने (चाहे वे किसी भी दल की हो) केंद्र सरकार के प्रस्तावित राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा बिल का विरोध किया है जिसे संसद के शीतकालीन सत्र[९] में लाने की संभावना थी।

जैवविविधता नियामक प्राधिकरण बिल, २०११ (बी.आर.ए. आई.) के पक्ष में प्रयास जारी है। इस बिल के तहत एक ऐसे निकाय के गठन का प्रावधान है जो देश में अनुवांशिक रूप से संबधित फसलों को अनुमति प्रदान करने वाला एक मात्र प्राधिकरण होगा। स्पष्ट रूप से इसका क्या मतलब है, इनका संवर्धन (रचना) उच्च तकनीक की मद्द से किया जाता है जिसमें ऐसे प्रजाति के जीनों को फसलों के बीज में डाला जाता है जिससे इनका कोई रिस्ता नही है। इस तकनीक में किसी दूसरे प्रजाति के जैसे. जीवाणुओं, वाइरसों, जानवरों एवं दूसरे असंबंधित पौधों के जीन को लेकर फसलों में नमी विशेषताओ को लाना है। ऐसा माना जाता है कि इन किस्मों के बीजों के उपयोग से फसलो में लगने वाले कीटों के नियंत्रण (रोक) के लिए छिडकाव किये जाने वाले रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग में कमी आयेगी।

इसके क्या खतरे है?[१०]

इस प्रकार का जीनो का मिलाप अप्राकृतिक है। प्रकृति में किसी भी जीव के जीन (कोशिकाओं)[११] की रचना क्रमिक रूप से एक समय सीमा मे होती है जिसे वैज्ञानिक आधार पर अब तक ज़्यादा नही समझा गया है। कम जानकारी वाली तकनीक से जुड़े खतरों को देखते हुए अधिक तर देशों ने इस तकनीक के उपयोग में उत्सुकता

६. देखें, http:// napm_india.org/node/470.
७. देखें, इकोनामिक पोलिटिकल वीकली, १३ अगस्त, 2011 vol. XIVI No. 33
८. देखे, http://www.indianexpress.com/news/govt-moves-a-step-closer-to-fdi-in-retail/877492/
९. देखे, http:// indianexpress.com/news/cong-states-jain-protess-on-food-bill/878455
१०. देखे, http:// www. greenpeace.org/india/global/india/report/bra1%20%20.critique.pdf
११. आधुनिक मालीक्यूलर जीवविज्ञान एवं अनुवांशिकी में जिनोंम किसीभी जीव के सभी अनुवांशिक जानकारी को बताता है।

नही दिखायी है। यू.एस.ए. में इस तकनीक के व्यवसायिक कृषि में १५ वर्षो के उपयोग के बावजूद केवल तीन देशों में ७५ प्रतिशत जी.एम. कृषि होती है। ये तीन देश यू.एस.ए. ब्राजील एवं अर्जेनटाइना है। भारत में बी.टी. कॉटन (कपास) एक मात्र जी.एम. फसल है जिसे व्यवसायिक कृषि उत्पादन के लिये अनुमति प्रदान की गयी है। ऐसा दावा किया जाता है कि इससे कीटनाशकों के उपयोग में कमी आयी है, जबकि वास्तविकता यह है कि देश में कीटनाशकों के उपयोग में बृध्दि हुई है। विदर्भ क्षेत्र में बी.टी. कपास के प्रचलन के बावजूद इस क्षेत्र में आत्महत्याए कम होने की जगह बढी है। जबकि, पिछले वर्ष लोगो के दबाव के कारण सरकार ने बी.टी. बैंगन के व्यवसायिक उपयोग पर रोक लगाया था। ऐसी लगभग ७४ जी एम फसलें है जो शोध के विभिन्न स्तरों पर है जिसे रोके जाने की आवश्यकता है। खाद्य सुरक्षा हमारे स्वास्थ एवं आनेवाली पीढियों के लिये महत्वपूर्ण है।

खाद्य संप्रभुता का मुद्दा दांव पर है। खाद्य संप्रभुता लोगों, समुदायों और देशो से जुड़ा अधिकार है। इस अधिकार के तहत अपने कृषि, मजदूरी, मछली (मत्यम), खाद्य एवं भूमि से जुडी नीतियों, जो पर्यावरणीय, सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूपसे उनकी विशिष्ट स्थितियों के लिए उपयुक्त हो, ऐसी नीतियों को परिमाणित, निर्धारित तथा लागू करने के क्षेत्र शामिल है।

छोटे उत्पादको एवं उन पारंपारिक स्थानीय लोगों के खुद के संकल्प, खाद्य एवं कृषि में लिंग (स्त्री पुरूष) न्याय तथा कृषि मजदूरो के अधिकार इस संघर्ष का हिस्सा है। जो सीधे तौर पर जीवन एवं जीविका के आधार से जुडें है। कृषि एवं मत्सम क्षेत्र से जुड़े वास्तविक सुधार, ग्रामीण क्षेत्रों से गरीबी उन्मूलन के लिये महत्त्वपूर्ण है। इसके आभाव में गरीब खाद्य उत्पादक, सतत एवं प्रभावी रूप से भूमि का उपयोग नही कर सकता है, तथा जंगलों एवं संसाधनो से जुड़े उनके जीविका के विकल्पों का विकास नही हो सकता है। खाद्य संप्रभुता के तहत भोजन के अधिकार के साथ खाद्य उत्पादन के लिये ऐसे तरीके आते है जो मानव स्वास्थ जैव विविधता एवं पर्यावरण की सुरक्षा करे।

खाद्य संप्रभुता के लिये भौगोलिक चोरी, जैव इंधन (जीन तकनीक पर आधारित) अर्थव्यव्यस्था एवं वातावरणीय जीनों पर कब्जा करना गंभीर खतरा है। भौगोलिक चोरी बताती है कि कैसे विश्व के उत्तरी देशों की सरकारे एवं व्यापारिक प्रतिष्ठानों ने अपने लाभ के लिये पर्यावरणीय एवं वातावरणीय समस्याओं को लेकर बढती चिंताओं का उपयोग भू–इंजीनियरिंग को क्विकफिक्स (समस्या के समाधान) के रूप में बढ़ावा दिया है। इसने पर्यावरण (परिस्थितिकी) की समस्याओ को गंभीर बनाने के साथ विश्व के दक्षिण भाग में निवास करने वाले लोगो पर विनाशकारी प्रभाव डाले है। ग्रीन (हरित) अर्थव्यवस्था की बढ़ती मांग तथा तेल की कीमतों में बढोत्तरी, व्यापारिक संगठनो को तेल आधारित उर्जा से हटकर पौधों पर आधारित उर्जा की ओर ले जा रहा है।

जीन तकनीक पर आधारित जैव इंधन अर्थव्यवस्था जीवित जीवधारियो को सूक्ष्मजीवों के कारखाने के रूप में व्यवहार करने की व्यवस्था करेगी तथा पर्यावरण की तरलता को बढायेगा। यह लोगों एवं दक्षिण के देशों की संस्कृति पर विनाशकारी हमले के साथ ही भूमि अधिग्रहण की प्रकिया को निर्धारित करेगा जैसा कि अफ्रिका, एशिया एवं लैटिन अमेरिका के कुछ हिस्सों में हो रहा है।

कथा कथित पर्यावरणीय रूप से तैयार फसलों के लिये विश्व की बडी कृषि व्यवसायिक कंपनियां – मोनसेंटो वी. ए.एस.एफ., डुपोंट एवं सिनजेनटा, लाखो डालर खर्च कर रही है एवं इन फसलों पर अधिकार का दावा कर रही है। इन फसलो के परिणाम स्वरूप औद्योगिक कृषि, गरीब किसानों द्वारा जोती जा रही ज़मीन में एकरूपता वाली फसलों को बढ़ावा देगी। इन फसलों में से खाद्य समस्या तो हल नही होगी बल्कि इनसे व्यापार के द्वारा शेयरधारकों की अधिक लाभ लेने की इच्छा को पूरा करेगी।

विश्व में अधिकारों से वंचित लोगों के बीच भोजन की कमी तथा लोगों के भोजन की आवश्यकता को पूरा करने मे वर्तमान में अधिक लागत एवं औद्योगिक बाजार द्वारा संचालित खाद्य व्यवस्था असफल हो रही है। यह व्यवस्था पर्यावरणीय सतत के सिद्धांतो का सम्मान नही करने के साथ स्थानीय लोगो के सशक्तिकरण तथा उनकी कृषि आधारित नागरिकता को भी कमजोर कर रही है।

औद्योगिक कृषि के द्वारा होनेवाले पर्यावरणीय, सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में गिरावट का विश्व में लोगों द्वारा विरोध हो रहा है[१२]। लोगो के इस विरोध ने नयी सुधारवादी कृषि कार्यो की ओर ले जाने का काम किया है। जिससे भोजन की कमी का शिकार एवं खाद्य उत्पादन मे लगे किसानों एवं उनके परिवारों के हाथ में नियंत्रण है न कि व्यवसायिक लोगों के हाथों में।

वर्तमान में विकसित पूंजीवादी विश्व जिसकी उच्चस्तर वाली कृषि जो खुद कि खाद्य ज़रूरतो को पूरा नही कर सकती है, वो विकासशील देशों के खाद्य तथा इंधन की उच्च उत्पादक क्षमता को नियंत्रण करने में लगा है।[१३]

खाद्य वितरण, खाद्य एवं कृषि लागतो में कीमतों में बढोत्तरी एवं अंतर्राष्ट्रीय पूंजी द्वारा खाद्य एवं कृषि इंधन के उत्पादन के

१२. देखें, Food Sovereignty -Reconnecting Food, Nature and Community, Edited by Annette Aurélie Desmarais, Nettie Wiebe, Hannah Wittman.

१३. देखे, The Agrarian Question in the Neoliberal Era- Primitive Accumulation and the Peasantry by Sam Moyo and Utsa Patnaik.

लिये भूमि के हस्तांतरण ने भूमि को लेकर नयी छीना–झपटी को बढावा दिया है।

इसी दौरान उदारीकरण के सुधारों से बेरोजगारी एवं कर्ज में बढोत्तरी, भूमि एवं मवेशियों का नुकसान, प्रतिव्यक्ति खाद्यान उत्पादन में कमी तथा पोषण संबंधी मानको में गिरावट आयी है। इस समस्या के समाधान के लिये किसानों को अस्थिर विश्व से जोडते हुए उनको भूमि से अलग किया गया है, एवं आयात पर निर्भरता को बढाया गया।

खाद्य संप्रभुता के लिये ऐसी नीतियों की आवश्यकता है जो छोटे उत्पादको के भूमि अधिकारों की रक्षा करे। पारंपारिक सहयोग उच्च उत्पादकता, आय एवं अर्थव्यवस्था को बढायेगा जिससे लोग आत्मसम्मान के साथ रह सकेंगे।

हमे खाद्य की कमी एवं खाद्य कीमतो की समस्या को अलग करते हुए[१४] इनको पूंजीवादी औद्योगिक उत्पादन की राजनैतिक अर्थव्यवस्था के साथ जोड के देखना होगा जो व्यापारिक संगठनों के हाथों में होने के साथ कुछ लोगो के लाभ पर आधारित है। जो तस्वीर सामने आयी है उससे साफ है कि विश्व खाद्यान उत्पादन से जुड़ी राजनैतिक अर्थव्यवस्था विश्व को भोजन उपलब्ध कराने में असफल होने के साथ असमानताओं को बढाया है जिससे भोजन की उपलब्धता में कमी आयी है।

कोई भी व्यक्ति जिसे खाद्य वितरण एवं बाजारो से जुडे मुद्दों में रूचि है उन्हें वर्तमान वैश्विक समस्या, वैश्विक संस्था एवं पूंजीवाद की भूमिका पर विचार करने के साथ ही विश्व खाद्य समस्या एवं इसके विश्व के दक्षिण एवं औद्योगिक उत्तर के देशों के गरीबों में प्रभावों पर गहन चिंतन की आवश्यकता है। क्योंकि, भोजन हमारे जीवन, समाज एवं अर्थव्यवस्था का मूलभूत हिस्सा है।

समस्या के आधार को समझने के लिये आवश्यक है कि वैश्विक पर्यावरणीय एवं आर्थिक रूप से संवेदनशील खाद्य व्यवस्था के हर पहलू पर विचार किया जाये। औद्योगिक कृषि खाद्यों से जुड़े राजनीतिक एवं आर्थिक जटिलताओं को समझने से यह पता चलता है कि कैसे हमारी खाद्य व्यवस्था से स्थानीय एवं देश का नियंत्रण कम हुआ है जिसने हमारे देश को अस्थिर वैश्विक बाजार पर निर्भर बनाया है जो कुछ अंतर्राष्ट्रीय कृषि खाद्य में एकाधिकार रखने वाले लोगो के लाभ पर आधारित है।

रिकार्ड कृषि उत्पादन के बाद भी विश्व मे भोजन को लेकर दंगे क्यों हो रहे है? कृषि इंधन एवं अनुवांशिक रूप से संवर्धित फसलों का वास्तविक प्रभाव क्या है? क्यो सतत से जुड़े दक्षिण के संपन्न खाद्य उत्पादक योजनाकारो की उपेक्षा का शिकार हुए है? इस समस्या को लेकर किसानों से जुड़े संगठन, जन संगठन एवं शोध करने वाले क्या कर रहे है?

हमे खाद्य व्यवस्था को, इसके निचले स्तर से ऊपर से नीचे तक बदलना होगा। हमे उन किसानों की सहायता करने की आवश्यकता है जो सतत खाद्य उत्पादन एवं कृषि पर्यावरण ज्ञान को किसानों से किसानों तक पहुंचा रहे है। कृषि पर्यावरण विकल्पों से जुड़ी बाधाओं को दूर करने के लिये आवश्यक है कि खाद्य एवं कृषि की पैरवी करने वालो द्वारा पारदर्शिता एवं नियमों में बदलाव की पहल हो। भूख एवं गरीबी की समस्या से जुड़ी खाद्य व्यवस्था में जन भागिदारी तथा लोगों के सुरक्षित, पोषक एवं सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त खाद्य अधिकार को सम्मान देने के साथ उन संसाधनों का भी सम्मान किया जाये जो खाद्य उत्पादन के उपयोग में लाये जाते है। संक्षेप में खाद्य संप्रभुता को सुनिश्चित करते हुए इसे मजबूत बनाने की आवश्यता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नियुक्त ओलिवर डी शुटर ने भोजन से जुड़े अधिकार से संबंधित रिपोर्ट में बताया कि[१५] ''कृषि परिस्थितिकी, कृषि विकास के माध्यम के रूप में न केवल खाद्य अधिकारों से मजबूत संबंध को बताती है बल्कि बहुत से देशों एवं पर्यावरणों में अधिकारहीन समूह के मानव अधिकारो को मजबूत बनाती है।[१६] इसके अलावा कृषि परिस्थितिकी ने ऐसे फायदे दिये है जो प्रचलित पारंपारिक तरीको के पूरक है जैसे अधिक उत्पादन वाली किस्मे। इससे आर्थिक विकास को मजबूती मिली है।'' ओलिवर ने तत्कालीन लाभ जो लम्बे समय के नुकसान में बदल सकता है। इसके बारे में चेतावनी देते हुए बताया है कि आगे चलकर पर्यावरण के नुकसान के साथ वर्तमान की उत्पादन क्षमताओं को बनाये रखना भविष्य की क्षयताओं के लिये खतरा है।

इस कृषि उत्पादन में बृध्दि से छोटे किसानों की जीविका में सुधार के साथ पर्यावरण की भी सुरक्षा होगी। इससे संबंधित देशों में शहरीकरण की प्रकिया धीमी पड़ेगी जहाँ जन सेवाओं का दबाव पड़ रहा है तथा ग्रामीण विकास में योगदान के साथ–साथ आनेवाली पीढीयो की पूर्ती की क्षमता भी सुरक्षित होगी।

---

१४. देखे, Food Rebellions! Crisis and the Hunger for Justice by Eric Holt-Giménez, Raj Patel.

१५. देखे, खाद्य के अधिकार पर संयुकत विशेष प्रतिवेदक ओलिवर डी शुटर की रिपोर्ट (http:// www2ohchr.org/English/imnes/food/docs/A-HRC-16-49. pdf)

१६. पर्याप्त भोजन के अधिकार को कई विशेष दस्तावेजों में जगह दी गयी है जैसे बच्चे के अधिकारों पर संधि (अनुच्छेद २४(२) (c) तथा २७ (३), महिलाओं के खिलाफ होने वाले भेदभाव के उन्मूलन पर संधि (अनु. १२(२)), या विकलांग लोगों के अधिकार पर संधि (अनु. २५ (f) तथा २८ (u)। परन्तु समान्यरूप से स्पष्ट इसको मानव अधिकारों के वैश्विक घोषणा के अनुच्छेद २५ में बताया गया जिसे (जी.ए.रिस. २१७ अ (III) द्वारा १० दिसंबर १९४८ को स्वीकारा गया। एवं आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारो पर अंतर्राष्ट्रीय संधि के अनु. ११ में १६ दिसंबर, १९६६ को स्विकारा गया।

संयुक्त राष्ट्र संघ के विश्व स्वास्थ संगठन की रिपोर्ट तीसरी दुनियां के लोगो के उपयोग की प्रवृत्ती एवं स्वास्थ पर अंतर्राष्ट्रीय खाद्य व्यापारिक संगठनों द्वारा डाले जाने वाले प्रभावो को बताती है – ''पश्चिमी मूल्यों एवं उत्पादों के साथ अधिक वसा, शुगर तथा कम रेशोयुक्त तैयार भोजन शीतल पेय का बहुराष्ट्रीय कंपनीयों द्वारा आधुनिक संचार माध्यमो द्वारा प्रचार–प्रसार''

खाद्य कंपनियों के दक्षिण के देशों में फैलने से कृषि निवेश, संवर्धन एवं खुदरा क्षेत्र में औद्योगिक कृषि का प्रभाव बढ़ा है ज़िससे अधिक संख्या में लोग ज़मीन से अलग होकर शहर के मलिन (स्लम) बस्तियों में विस्थापित हुए है। कृषि भूमि में अंतर्राष्ट्रीय संगठनों का प्रत्यक्ष नियंत्रण बढने के साथ विदेशी सरकारों द्वारा उत्पादित भोजन या फसलों को अपने देश भेजने या निर्यात करने का लक्ष्य रहा है। भारतीय औद्योगिक संगठन भी इस दौड़ में पीछे नही है जैसा कि समाचार पत्र के अंतर्राष्ट्रीय समाचार खंड में वर्णन किया गया है।

इस समस्या का एक पहलू खाद्य उत्पादन द्वारा जलवायु परिवर्तन की संभावना है। वैश्विक खेती से जुड़े छोटे एवं मध्यम तरह के परिणाम ज़्यादा चिंता का विषय रहे है। उष्ण कटिबंधीय एवं उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु क्षेत्र के किसान जो जीविका के लिये कृषि पर आधारित है, उन्होने अनिश्चित बारिश, स्थायी सुखा, तटीय बाढ, साफ पानी की समस्या को अनुभव किया है। उपलब्ध आंकडे[१७] बताते है कि यदि वैश्विक तापमान में २.८ डिग्री की बढोत्तरी हुई तो विश्व स्तर पर खाद्य फसलों के उत्पादन में भारी कमी आयेगी।

पर्यावरण वैज्ञानिक लिस्टर ब्राउन का मानना है कि बडे पैमाने पर फसलों की बर्बादी खतरे का संकेत है और इसके प्रति हमे जागरूक रहने की ज़रूरत है। यह खतरा सामाजिक संवाद की आवश्यकता की ओर जोर देता है ताकि हम पर्यावरणीय समस्याओं को सही मायने में दूर करने की ओर प्रेरित हो सके। स्पष्ट है कि सामूहिक रूपसे हम विचार (आत्ममंथन) नही करेंगे तो हमे कोई और जागरूक नही कर सकता ..... भारत एवं चीन में कोयले के इंधन से चलने वाले उद्योगों से हुए उत्सर्जन का पिछले वर्ष विश्व के कुल उत्सर्जन का १.६ पी.पी. एम. रहा जो अभी तक की रिकार्ड बढत रही जो हमे ३९५ पी.पी.एम के स्तर पर ले गयी। पिछले १२००० वर्षो में वातावरण में CO_2 या काबईनडायक्साईड का स्तर ३५० पी.पी.एम. रहा था जिसने धरती पर कृषि तथा सभ्यता को मानव द्वारा विकसित होने दिया। वर्तमान औद्योगिक विकास दर के स्तर में इसे ४५० पी.पी.एम. के स्तर पर बनाये रखना बडा चुनौती वाला काम है। वैज्ञानिकों का मानना है कि यदि वैश्विक तापमान के २°C स्तर पर स्थिर होने से मनुष्य के जीने की संभावना ५० फीसदी रहेगी। क्या कोई भी उस जहाज पर सवार होना चाहेगा जो कि उन्हे उनके स्थान पर सुरक्षित पहुंचाने का ५० फीसदी ही भरोसा दिलाता है।[१८]

आज से लगभग १५० साल पहले कार्ल मार्क्स ने मेटाबोलिक विखंडन का विचार दिया था जिसमें उसने मानव प्रजाति एवं प्रकृति के बीच पारस्परिक सह अस्तित्व के सबंध की आवश्यकता को बताया था। मार्क्स का विचार था कि मनुष्य एवं प्रकृति के बीच जैविक सबंधों में विघटन तब शूरू हुआ जब औद्योगिक क्रांति हुई, मिट्टी को पूंजी से जोड़ा गया और प्रकृति को वस्तु के रूप में देखा जाने लगा। आज इसपर गंभीरता और भी साफ हो गयी है जब खाद्य राजनिति एवं पानी से जुड़े विवाद जैसे विषय मुख्य धारा से जुडकर वैकल्पिक संवाद के रूप में सामने आये है।

ये स्पष्ट है कि यदि वर्तमान मानवीय समस्या के बडे हिस्से को हल करना है तो नयी कृषि खाद्य व्यवस्था की आवश्यकता है। जिसके तहत सभी की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित होने के साथ पर्यावरण के लिये भी उपयुक्त हो। जीवाश्म इंधन पर आधारित औद्योगिक उत्पादन पर हम लंबे समय तक निर्भर नही रह सकते। ये औद्योगिकीकरण का ही परिणाम है कि शहरी क्षेत्र में मलिन बस्तियों (स्लम) में विस्थापन हुआ है। आजीविका के संदर्भ में ये ज़्यादा उचित होगा कि लघु स्तर की उत्पादन इकाइयों को बढावा दिया जाये ताकि अधिक से अधिक स्थानिय संसाधनों का उपयोग हो। हाल के अध्ययनों से ये बात सामने आई है कि उच्च उत्पादक फसले पर्यावरण के अनुकूल तरीके से जिसमे जैविक खेती भी शामिल है, के द्वारा उत्पादन संभव है। जबकि औद्योगिक कृषि जीवाश्म इंधन पर आधारित है जिससे कीटनाशकों एवं उर्वरको का भी उत्पादन किया जाता है। कृषि के पारंपरिक तरीके (पर्यावरणीय रूप से उपयुक्त हो) स्वस्थ मिट्टी का निर्माण एवं फसलो की नयी किस्मों का विकास एवं घरेलू मवेशियो पर ज़्यादा निर्भर होने के साथ कृषि के कुछ अतिरिक्त स्रोतो पर भी निर्भर करते है जो एक उपयुक्त एवं स्वस्थ पर्यावरणीय सोच है।

मिलिंद

---

१७. देखे. www.ipcc.ch

१८. देखे, http:// www.ecobuddhism.org/wisdom/editorials/erbp

१. समाचार एवं विश्लेषण

महिको/मोनसेन्टो एवं उनके भागीदारों पर बीटी बैंगन को बढावा देने के लिये किये गये जैवविविधता सुरक्षा कानून के उल्लंघन के खिलाफ राष्ट्रीय जैवविविधता प्राधिकरण एन.बी.ए. अभियोग लायेगा।

देरी से लिया गया भारतीय राष्ट्रीय जैवविविधता प्राधिकरण का यह निर्णय अभूतपूर्व है कि महिको/मोनसेन्टो तथा उनके भागीदारों के द्वारा उपयुक्त प्राधिकरण की पूर्व अनुमति लिये बिना बैंगन की स्थानिय किस्मों तक पहुंच कर उनका उपयोग बीटी बैंगन विकसित करने के खिलाफ कानूनी कार्यवाही होगी। २० जून,२०११ को एन.बी.ए. की मीटिंग में एन.बी.ए. के निर्णय पर आधिकारिक प्रस्ताव दिया गया। इस मीटिंग से जुड़ी जानकारी ११ अगस्त २०११ को सामने आयी जिसमें एन.बी.ए. के निर्णय को बताया गया कि

> ''बी.टी. बैंगन पर कानूनी विचार के अतिरिक्त लेख में मेस. महिको/मेस. मोनसेन्टो एवं उनके सहयोगीयों द्वारा संबन्धित प्राधिकरण से बिना किसी पूर्व अनुमति के बैगन की स्थानीय किस्मों तक पहुंच कर उनका उपयोग बी.टी. बैगन विकसित करने के लिये कथित उल्लंघन पर विचार किया गया। तथा यह फैसला किया गया कि एन.बी.ए. मेंस. महिको/मेंस मोनसेन्टो तथा उनके सहयोगीयों के खिलाफ कानूनी कार्यवाही करते हुए प्रकरण/मुद्दे को तार्किक अंत तक ले जायेगा।''

''कथित उल्लंघन'' एन.बी.ए. की जानकारी में कर्नाटक जैवविविधता बोर्ड द्वारा दी गयी रिपोर्ट से आया था। कर्नाटक जैवविविधता की रिपोर्ट, पर्यावरण सहायता समूह (ई.एस.जी.). द्वारा १५ फरवरी, २०११ को दर्ज करायी गयी शिकायत पर आधारित थी। बोर्ड ने शिकायत के आधार पर विषय की गहनता एवं व्यवस्थित जॉच करने के बाद रिपोर्ट तैयार कर २८ मई, २०११ के एन.बी.ए. को भेजी थी जिसमे यह बताया गया था कि मेंस. महिको/मेंस. मोनसेन्टो एव उनके सहयोगीयों द्वारा बीटी बैगन को विकसित करने के लिये राज्य जैवविविधता बोर्ड/राष्ट्रीय जैवविविधता बोर्ड की अनुमति के बिना कर्नाटक राज्य की बैंगन की ६ स्थानीय किस्मों का उपयोग किया गया है।

इस. एस. जी द्वारा दर्ज शिकायत में साफ तौर पर बताया गया कि ये संस्थाये आपराधिक तरीके से एन.बी.ए., एस.बी.बी. (राज्य जैवविविधता बोर्ड) एवं संबंधित जैवविविधता प्रबंधन समिति के अनुमति एवं जानकारी के बिना कर्नाटक एवं तामिळनाडु राज्यों से बैंगन की १० किस्मों को उपयोग में ला रही है।

नोट : यह जानकारी लियो सलदाना (ईमेल : leo@erg.india.org) तथा भारगवी एस. राव् (ईमेल : bhargavi@ergindia.org) द्वारा तैयार किये गये लेख को ली गयी है। इसलेख को http://www.ergindia.org/campaigns/brinjal/press/national-biodiversity-authority-prosecut.html पर पढा जा सकता है।

विविधता की पैदावार

ऐसा माना जाता है कि जैवविविधता जो किसी स्थान विशेष एवं पुरे विश्व में पौधों तथा जीवों की अलग–अलग किस्मों से जुड़ी है उसमें कमी आयी है। कृषि जैवविविधता जो जैवविविधता का एक हिस्सा है वह भी सुरक्षित नही है। पर्यावरणवाद, कृषि को – जो एक प्रक्रिया के तहत जीवो, पौधों, फफूद (कवक), अन्य जीवों की पैदावार से संबन्धित होने के साथ भोजन, रेशें (फायबर) एवं अन्य उत्पादों जो जीवन को बनाये रखने से जुड़ी है – भी जैवविविधता के नुकसान का कारण मानता है। जैवविविधता संधि (सीबीडी) में भी यह माना गया है कि २०१० से २०५० के बीच होनेवाली जैवविविधता की हानि का मुख्य कारण कृषि होगी। मानव जीवन के धरती पर बढने के कारण यह अपेक्षा है कि कृषि उत्पादन में भी बढोतरी होगी। इसी क्रम में अविकसित जैवविविधता वाले क्षेत्रों को कृषि एवं मछली पालन के कामों के उपयोग मे लाने की प्रक्रिया पहले से हो रही है। परन्तु जैवविविधता का विकास इस बात पर निर्भर करेगा कि क्या, कहां, कैसे, कितनी पैदावार किसी के द्वारा की जायेगी।

पिछले दो दशकों में कृषि से जुडे व्यापारिक संगठनों की संख्या में बेतहासा बृध्दि हुई है। इन बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने बीजों एवं नसलों में अपने नियंत्रण को बढाने के साथ कृषि एवं खाद्य (भोजन) में भी नियंत्रण किया है। इन कंपनियों द्वारा किये जाने वाले व्यवसाय कृषि व्यवसाय है। कृषि व्यवसाय का मतलब (आशय) खाद्य उत्पादन कृषि एवं संविदा (ठेकेवाली) कृषि, बीजों की पूर्ती, कृषि रसायन, कृषि से जुडी मशीने, थोक बिक्री एवं वितरण, खाद्य प्रसंस्करण, मार्केटिंग, खुदरा बिक्री के व्यवसाय से है।

बीते समय में कृषि अपने पारंपरिक मायनों में प्रकृति के साथ समन्वय (मेल) के रूप में देखी जाती थी। परंतु कृषि व्यवसाय

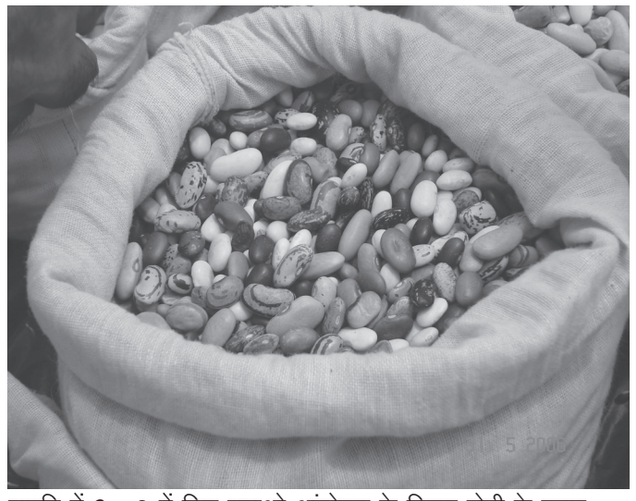

नागनि में २००६ में बिज बचाओ आंदोलन के विचार गोष्टी के समय राजमा बीजों का प्रदर्शन।

में औद्योगिक खाद्य तथा कृषि व्यवस्थाओं के आने के बाद से प्रकृति के विरूध्द सतत संघर्ष हुआ है। वर्तमान समय में कृषि में खरपतवारो को हटाना, जानवरों से जुड़ी बीमारी, पानी की कमी, मिट्टी की कम उत्पादकता आदि से जुड़े कम उपयोगी तरीको को लाया गया है। कृषि से जुडी अधिकतर समस्याऐ, रसायन युक्त, संसाधन आधारित, विविधता नाशक प्रक्रिया के खिलाफ प्रकृति की प्रतिक्रियां का परिणाम है।

घटती विविधता की दिशा में किये गये प्रयास समान्यत: विविधता लाने में हुई विविधता के नुकसान की समस्या की तरफ रहे है। आर्थिक विश्व के लिये विविधता को लाने का मतलब अलग–अलग तरह कि संपत्तियों में निवेश करते हुए खतरे को कम करने से रहा है। जबकि मुख्यधारा की कृषि में विविधकरण का मतलब कृषि संसाधनों को नये कार्यो में लगाने से है। किसानों का विकल्पों के लिये उपयोग केवल एक प्रकर की अनुवांशिक या संकरित रूप से तैयार फसलों के लिये न होकर, बल्कि कई प्रकार की फसलों के लिये हो रहा है जिसे बाजार उपलब्ध करा रहे है। सरकार इस तरीके की ग्रामीण विकास के लिये पक्षधर है। उद्देश्य यह है कि ज़्यादा से ज़्यादा कृषि उत्पादों को विश्व के बाजार में लाया जाये तथा ज़्यादा से ज़्यादा किसानों को बाजार के हवाले किया जायें। यह सब कृषि जैवविविधता की अनदेखी कर हो रहा है।

दूसरी ओर, छोटे खेतों एवं कम लागत वाली कृषि को स्थानीय कृषि एवं जीविका के उपयोग के लिये पूरी तरह से अलग परिस्थितियो के तहत लाया गया है। जैवविविधता वाली कृषि, कृषि परिस्थितिकीय (पर्यावरण) कों संतुलन बनाये रखती है। जैवविविधता वाली कृषि स्थानीय बीजों एवं विभिन्न नस्लों के उपयोग को बनाये रखने से है। यह स्थानीय समुदायों के ज्ञान, नये तरीकों एवं कार्यों को सम्मान देने से है। यह पर्यावरण की तरह ही लोगो को एकसाथ लाने का सामाजिक आंदोलन हो सकता है।

कृषि का मतलब पैदावार से है। पैदावार का अर्थ केवल उत्पादन को बढाना नही है बल्कि फसल उपजाने के दौरान पालन–पोषण एवं प्रबंधन के संबन्धों को बनाना है। हमे जीवित कृषि की आवश्यकता है जो विविधता को उगायें जिससे कृषि प्रकृति की साथी के रूप में देखी जायें।

सहयोग – यह लेख शालिनी भुटानी द्वारा तैयार किया गया है। शालिनी स्वतंत्र रूप से दिल्ली स्थित वकील एवं व्यापार, कृषि एवं जैवविविधता से जुड़े मुद्दों पर कार्य करती है। पिछले १५ वर्षो में आप कई अंतर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठनों जैसे, **पर्यावरण कानून केंद्र – डब्लू.डब्लू.एफ. – भारत, नवदान्या एवं ग्रेन** से जुड़ी रही है। इसके अलावा आप २००४ से कल्पवृक्ष के साथ मिलकर जैवविविधता के संरक्षण और समुदायिक नियंत्रण अभियान का संचालन करती आ रही है। इन सब के अलावा शालिनी भारत में मुक्त व्यापार समझौते के खिलाफ अभियान से भी जुड़ी थी।

बी.आर.ए.आई. बिल में प्रस्तावित नयी नियामक निकाय की पेशकश (प्रस्ताव) का विरोध

पर्यावरण क्षेत्र से जुडे लोगो के एक छोटे समूह द्वारा संसद भवन के आस–पास भारतीय जैवतकनीक नियामक प्राधिकरण बिल, २०११ के विरोध में प्रदर्शन किया गया। इस बिल का विरोध कर रहे लोगो का तर्क है कि इस बिल के द्वारा प्रस्तावित नयी नियामक निकाय/संस्था अनुवांशिक रूप से संवर्धित फसलो को अनुमति देनेवाली 'एकल खिडकी' के रूप में काम करेगी।

'जी.एम. मुक्त भारत' अभियान से जुड़ी कवीथा कुरूगंटी का कहना है कि बी.आर.ए.आई. बिल लोगो के अनुवांशिक रूप से संबधित फसलो से जुड़ी वास्तविक चिंताओं एवं इसके विरोध को खत्म करने का स्पष्ट प्रयास है। यह बिल कृषि एवं स्वास्थ से जुड़ी राज्य सरकारो के संवैधानिक अधिकार को भी नकारता है।

अनुवांशिक सुधार से किसे भय है?

व्यवसायिक रूप से उगाये जाने वाली लगभग सभी फसलें दो प्रकारो में से किसी एक प्रकार कि होती है – एक प्रकार वो है जो इस तरह से तैयार की गयी हो जो ऐसे रसायनों के प्रयोग को रोके जो खरपतवारों (अनचाहे पौधों) के लिये उपयोग में लाये जाते है जैसे मोनसेन्टों की राउंड रीप किस्में), दूसरा प्रकार वो है जो एक या एक से अधिक कीटनाशक प्रोटीन प्रदान करे जिसे बी.टी. (बिसिलस थरिगीनिसिस) बैक्टीरिया (जीवाणु) से निकाला गया हो। हालहि में आयी किस्मों में दोनो विशेषताएँ है इस तकनीक को ''जीन स्टैकिंग'' को शिका व्यवस्था, के रूप में जाना जाता है। २० वर्ष पूर्व किये गये दावें गलत साबित हुए है कि इस तकनीक द्वारा फसलों को लचीला एवं स्वस्थ रखते हुएँ पूरे विश्व को भोजन उपलब्ध कराया जायेगा। जबकि, मोनसेन्टो जैसी कंपनीयाँ अपने शोध एवं विकास को विशेषतओं पर केन्द्रित कर रही है जो किसानों को ट्रेडमार्क (व्यवसायिक चिन्हं) रसायनों पर निर्भर बनायेगा। कृषि को अधिक लचीला बनाने के लिये यह आसान होगा कि कृषि के बडे क्षेत्रफल को मशीन आधारित कृषि के अंदर लाया जायें।

पर्यावरण पर कार्य कर रही संस्था ग्रीनपीस के कई स्वयंसेवकों को संसद भवन के बाहर बैनर लहराने के प्रयास के खिलाफ दिल्ली पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया था। बैनर में लिखा था कि ''हमारे भोजन को दुषित मत करो''।

बी.आर.आई. बिल को रोको इस बिल के साथ जुड़ना क्यों ज़रूरी है?[१९]

१. यह आवश्यक है कि कृषि तकनीक से जुडी बहस से हम जुड़े क्योंकि अन्य तकनीको से अलग यह तकनीक प्रभाव डालने वाली है। ऐसा इसलिए भी ज़रूरी है क्योंकि देश की अधिकतर भूमि कृषि में लगी होने के साथ देश के अधिकांश लोगों की जीविका इससे जुडी है इसके अलावा प्रमुख पहलू यह भी है कि हमारा भोजन कृषि से आता है। हमे अपने आप को परायी जीव (दूसरे जीवों की कोशिकाओं) पर आधारित तकनीक से जोडने की आवश्यकता है क्यों की यह ऐसी जीवित तकनीक है जो सही नही, अप्रत्याशित, अनियमित एवं अपरिवर्तनीय समझी जाती है।

२. इसकी बहुत कम संभावना है कि जी.एम. खाद्य/फसलों के आने के बाद भोजन असुरक्षित और दुषित नही होगा। हमारा खाद्य सीधें तौर पर भोजन की गुणवत्ता से जुड़ा है और इसलिए भारत में नियामक व्यवस्था लानेकी प्रक्रियां इस बिल द्वारा की गयी है।

३. जी.एम. फसलों के लिये किये जा रहे दावों पर लाखों करोडों किसानों की जीविका निर्भर करेगी और फसल उगाने वाली परिस्थितियों में इन नयें बीजों तथा पौधों की वास्तविकता के साथ–साथ छोटे किसानों एवं दूसरों की सामाजिक तथा आर्थिक परिवेश पर भी निर्भर करेगा। जी एम फसलों के चलते पर्यावरणीय संसाधनों पर किसी प्रकार का बुरा प्रभाव एवं फसलों की परिस्थितिक तंत्र में गंभीर बदलाव किसानों की जीविका पर सीधा प्रभाव डालेगी क्योंकि जीविका आंतरिक रूपसे इन संसाधनों की स्थिति एवं उपलब्धता पर निर्भर है। ऐसी नियामक व्यवस्था जो जैव सुरक्षा तथा अन्य संबन्धित मुद्दोंपर ध्यान नही देती है वो केवल उद्योगों के लिये फायदेमंद होगी नकि ज़्यादातर गरीबों के लिये।

इस बिल के विषय में तर्क दिया जा रहा है कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय का जैव प्रौद्योगिकी विभाग का मुख्य कार्य जैव प्रौद्योगिकी को बढावा देना है अत: यह तर्क संगत नही होगा कि यह विभाग इस बिल को नियंत्रित करने के साथ–साथ जैव प्रौद्योगिकी सुरक्षा के लिये जिम्मेदार हो। इस बिल के विरोध करने वालो का मत है कि बी.आर.आई.ए. एक निगरानी निकाय होने के साथ इसे स्वास्थ या पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के आधीन होना चाहिएँ।

नोट : यह लेख प्रिसिला जेबराज में द हिन्दू समाचार पत्र में लिखा जिसे http:// www. thehindu.com/news/national/article2366599.ecce पर पढा जा सकता है।

१९. http://www.karmyog.org/message/upload/4889/20ur%analysis%200f%20BRAI.Pdf.

कश्मीर में ३२००० हेक्टयर पर जैविक खेती एवं भविष्य में बढने की संभावना

जम्मू–कश्मीर राज्य के किसान राज्य की ३२००० हेक्टर पर भूमि पर लम्बे समय से जैविक खेती करते आ रहे है। विश्वभर में जैव उत्पादों की बढती हुई मांग को देखते हुए राज्य और अधिक क्षेत्र (भूमि) को जैविक खेती की प्रक्रिया में लाने के लिये कार्यरत है।

कृषि विज्ञान एवं तकनीक से जुड़े शेरे–ए–कश्मीर विश्वविद्यालय (एस.के.यू.एस.टी.) ने हाल ही में ऐसे २०० किसानों की सूंची तैयार की है जिनके पास जैविक खेती है। किसानों की मांग है कि उनके जैविक उत्पादों के लिये प्रमाणपत्र दिये जाये। एस.के.यू. एस.टी. किसानों की जैविक उत्पादकता बढाने के लिये उनकी सहायता करेगा।

एस.के.यू.एस.टी. के उपकुलपति का कहना है कि ''उनको लगता है कि निकट भविष्य में कश्मीर रासायनिक तरीके से खेती को नकार देगा। कश्मीर जैविक खेती के लिये प्राकृतिक स्थान है और राज्य की इसमें भरपूर क्षमता है।''

हमारे पास राज्य में भूमि का एक बडा भाग ऐसा है जहां किसान जैविक तरीको से अखरोट एवं जड़ी–बूँटी की पैदावार कर रहे है। ३२००० हेक्टर पर किसानों द्वारा रासायन का बिल्कुल उपयोग नही होता है। ज़्यादातर किसान अखरोट, केसर, बादाम का निर्यात कर अच्छा पैसा पा रहे है। किसान अखरोट जैविक तरीकों से उगा रहे है, वो केसर की भी खेती जैविक तरीको से कर सकते है।

कश्मीर पूरे राज्य में ४० लाख अखरोट के पेडों से ३७००० टन अखरोट प्रतिवर्ष उत्पादित करता है। एस.के.यू.एस.टी. ने जैविक खेती को बढावा देने के लिये थोडे समय पहले संपूर्ण जैविक खेती कार्यक्रम की शुरूआत की है।

स्रोत : www. Indianexpress.com/news/kashmirs-organic farms-32-000 hectares and growing/ 8631010.

संयुक्त राष्ट्र रिपोर्ट – जैविक खेती से अगले दस वर्षों में दुगना उत्पादन की संभावना

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा भोजन के अधिकार के विषय पर नियुक्त प्रतिनिधी ओलिवर डी शुटर ने पांच वर्षो के वैज्ञानिक शोधों के बाद स्पष्ट किया कि कृषि परिस्थितिकी (पर्यावरण), कृषि के विकास के माध्यम के रूप खाद्य अधिकार से मजबूत संकल्पना के रूप में जुड़ी है। कृषि पर्यावरण के विकास से बहुत से देशों तथा पर्यावरणों में अधिकारहीन समूहों के मानव अधिकारों को मजबूती मिली है। इसके अलावा कृषि पर्यावरण ने उच्च उत्पादक किस्मों को तैयार करने जैसे लाभ दिये है जो पारंपरिक तरीकों के पूरक है। इसने बडे आर्थिक विकास में मजबूती से योगदान दिया है।

रिपोर्ट इस ओर संकेत करती है कि कृषि परिस्थितिकी से जुडे अनुभवों का बढाना वर्तमान में एक प्रमुख चुनौती है। ऐसी उपयुक्त जननीति की आवश्यकता है जो उत्पादन के सतत (स्थायी) तरीकों के निर्माण में एक वातावरण बनाये। इस प्रकार की जननीतियों में जन उपयोगी चीजों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए न कि केवल कृषि से जुड़े लागत अनुदानों (सब्सिडी) को। कृषि शोध एवं सेवाओं के विस्तार में पुनर्निवेश के जरिये – ज्ञान, भागीदारी बढाने वाले सामाजिक संगठन, कृषि स्कूलों, किसानों के अंदोलनों तथा नयी रीतियों में, कृषि शोध एवं सेवाओं के विस्तार, महिला सशक्तिकरण, वृहद आर्थिक विकास एवं स्थायी खेतों को उपयुक्त बाजारों से जोडने के क्षेत्रों पर निवेश करने की ज़रूरत है।

कृषि परिस्थितिकी प्रकृति की विविधता से जुड़ी है न कि औद्योगिक प्रक्रियां से। यह बाहरी लागतों जैसे ऊर्वरक के उपयोग को उस ज्ञान से हटाती (उपयोग बंद) है जिसके द्वारा कैसे पौधों, पेडों एवं जानवरो के सम्मिलित उपयोग से भूमि उत्पादकता को बढाया जाता है।

ओलिवर ने अपनी रिपोर्ट में जोर दिया कि ''सब सहारा – आफ्रिका के २० देशों में चल रहे ४४ परियोजनाओं (प्रोजेक्ट) के तहत उपयोग में लायी गयी कृषि परिस्थितिकी तकनीक से तीन से दस साल के भीतर कृषि उत्पादन में २१४ प्रतिशत की बढोत्तरी हुई है जो किसी भी जी एम बीज से हुएं उत्पादन से कई गुना अधिक है।''

हाल के एक अन्य वैज्ञानिक आंकलन के अनुसार विश्व के ५७ देशों में छोटे किसानोद्वारा कृषि परिस्थितिकी तकनीक का उपयोग करने से उनके उत्पादन में ८० प्रतिशत तक की बृध्दि हुई है। जबकि, आफ्रिका की औसत बढत ११६ प्रतिशत है।

कृषि परिस्थितिकी न केवल मिट्टी की उर्वरता को बढाती है बल्कि प्राकृतिक तरीकों से फसल की कीटों से भी सुरक्षा करती है। इससे जुड़ी प्रक्रियां में हानिकारक एवं कीमती कीटनाशकों, रासायनिक खाद्य एवं संकरित बीजों की ज़रूरत नही होती है। पारंपरिक खेती में कृषि रासायनों को बढावा दिया गया है जो मंहगे तथा घातक होने के साथ पर्यावरण को नुकसान पहुंचाते है और पर्यावरण में तापमान को बढाते है। वर्तमान में खाद्य उत्पादित करने वाले उद्योगों द्वारा ४० प्रतिशत ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन किया जा रहा है जो अपने आप में एक बड़ा हिस्सा है।

छोटे खाद्य उत्पादक पारंपरिक ज्ञान तथा तरीकों से जैविक खेती करते है। विश्व की भूख, गरीबी और जलवायु परिवर्तन से जुडी समस्याओं के समाधान के लिये पारंपरिक ढंग से होने वाली कृषि को बढावा देने के लिये सरकारों के राजनैतिक इच्छाशक्ति की जरूरत है।

स्रोत : http://www.panap.net/en/fs/post/food-soveregnity/644

मधुमक्खी या मधुमक्खी नही?

वर्ष १९९१ में फैली थाई स्केबुड बीमारी के कारण दक्षिण भारत में घरेलू एवं जंगली मधुमक्खी से जुड़ा उद्योग बुरी तरह से प्रभावित हुआ जिसके कारण इस उद्योग को भारी नुकसान का सामना करना पड़ा । ऐसा माना जाता है कि इस बीमारी का कारण प्रवास/पलायन करने वाली प्रजाति की मधुमक्खी एक्सि मेलिफेरा है। इस प्रजाति की मधुमक्खी पालन की तमिलनाडु राज्य के कन्याकुमारी जिले में शुरूआत की गयी। बीमारी के फैलने से हुऐ नुकसान के कारण कर्ज नही लौटा पाने की स्थिति में कई मधुमक्खी पालन करने वालो ने आत्महत्या कर ली और कईयों ने इस मधुमक्खी पालन को ही छोड़ दिया।

विदेशी मधुमक्खी पालन के प्रक्रिया के दौरान इन मधुमक्खीयों को ऐसे स्थान में लेकर जाना पड़ता है जहां इनके लिये उपयुक्त फूलों का मौसम हो। संयुक्त राज्य अमेरिका में इन प्रवासी मधुमक्खियों द्वारा उत्पादित परागन (एक प्रकार का उत्पाद जो मधुमक्खियों द्वारा किया जाता है) की मांग वहां अधिक सधन खेती के कारण है। क्योंकि, इस प्रकार की व्यवस्था ज़्यादा कीटनाशकों के उपयोग के चलते परागन के लिये उपयुक्त नही है। परागन की बढती मांग का कारण विविधता का नही होना है, जिसकारण कृत्रिम परागन पर निर्भरता बढी है। अमेरिका में भी मधुमक्खी पालन उद्योग को कई बीमारियों एवं परजीवी के कारण नुकसान उठाना पड़ा है। कुछ युरोपीय देश जिन्हे मधुमक्खियों की संख्या में कमी का सामना करना पड़ा है जिसके परिणामस्वरूप परागन सेवाओं की कीमतों में वृध्दि हुई है, उन देशों ने ऐसी नीतियों को अपनाने की पहल की है जो किसानों को उनके खेतों में कुछ भाग/क्षेत्र, जंगल के रूप में छोड़ने के लिये प्रेरित करेगी ताकि ये क्षेत्र जंगली परागन के लिये संसाधन के रूप में उपयोग में लाये जा सके।

भारत में परागन सेवायें मुख्यत: विभिन्न प्रकार के जंगली कीट (जो परागन तैयार करते है) द्वारा उपलब्ध करायी जाती है, जबकि खाद्य ज़रूरतों का सामना करना पड़ रहा है तथा कृषि उत्पादकता को तेजी से बढाया गया है। परागन तैयार करने वालों की भूमिका कुछ फसलों के उत्पादन को बढाने के लिये पहचानी गयी है।

राष्ट्रीय उद्यान बोर्ड, केंद्र एवं राज्यों के उद्यान विभागों एवं खादी तथा ग्रामीण उद्योग संघ, भारतीय कृषि शोध संस्थान की शोध एवं विकास की सहायता द्वारा व्यवसायिक मधुमक्खी पालन को बढावा दिया गया है। कई ऐसे कीटनाशक सामने

आये है जो मधुमक्खियों के लिये हानिकारक साबित हुए है। २०१० में विज्ञान एवं पर्यावरण केंद्र तथा यूरोपीय संघ द्वारा किये गये अध्ययन से यह तथ्य सामने आया कि भारत में उत्पादित शहद में भारी मात्रा में कीटनाशकों के प्रयोग से जीवप्रतिरोधी (एन्टिबायोटिक) तथा ठोस धातुओं के अणु की आवश्यकता से ज़्यादा मात्रा है। जो यह बतलाता है कि व्यवसायिक स्तर पर की जाने वाली मधुमक्खी पालन प्रक्रियां स्वस्थ नही है।

ऐसे नियम एवं प्रावधानों में संशोधन की आवश्यकता है जिसके कारण बड़े स्तर व्यापारिक मधुमक्खी पालन एवं कृषि कार्यो को बढावा दिया गया है जिससे मधुमक्खी पालन को ख़तरा है। यह भी ज़रूरी है कि हम उन व्यवस्थाओं से सीखें जो अस्थिर साबित हुई है। भारत में जंगली मधुमक्खियों की घटती संख्या एवं व्यवसायिक तरीकों पर निर्भरता ने छोटे किसानों को पर्यावरण द्वारा दी जाने वाली मुफत सेवाओं से वंचित किया है। हरित क्रांति से सीख लेते हुऐ भारत के लिये यह जरूरी है कि वह ऐसी कृषि नीतियों को अपनाये जो उत्पादन को बढाने के साथ–साथ स्थायी एवं समिकित हो।

सहयोग : यह लेख जान्हवी जी पाई (email : jahnavi@atree.org) एवं एम. सुभद्रा देव (email : soubadra@atree.org) द्वारा तैयार किया गया है। आप दोनों सूरी सहगल जैवविविधता एवं संरक्षण केंद्र से जुड़ी है।

पता : अशोका परिस्थितिकी एवं पर्यावरण शोध ट्रस्ट, बॅगलोर, रॉयल इनक्लेव, श्रीरामपुरा, जकूर, पो. बैंगलोर–५६००६४, कर्नाटक, भारत.

कर्नाटक के बिलगिरी रंगास्वामी मंदीर वन्यजीव अभयारण्य में रहने वाली सोलिगओं ने वनाधिकार अधिनियम के तहत समुदायिक वन अधिकार (सी.एफ.आर)[२०] लिया।

पिछले ३१ वर्षो से भूमि एवं समुदायिक अधिकारो के लिये संघर्ष कर रहे सोलिगा आदिवासियों को गांधी जयंती. २ अक्टूबर, २०११, के उपलक्ष्य पर समुदायिक वन अधिकार दिये गये। ये अधिकार बिलगिरी रंगास्वामी मंदिर वन्यजीव अभयारण्य तथा इसके आस पास के चामराजनगर के अंतर्गत आनेवाली २५ ग्राम सभाओं को दिये गये। वनाधिकार अधिनियम की धारा ३ (१) (c), (d), (k) एवं (i) में सी.एफ.आर. को शामिल किया गया है। अधिनियम की ये धारायें बतलाती है कि यदि कोई समुदाय, समुदायिक संसाधनों का पारंपरिक तरीकों से सतत उपयोग के लिये संसाधनों की सुरक्षा तथा संरक्षण करते आ रहे है तो ऐसे समुदायों के संसाधनों की सुरक्षा, फिरसे उत्पादन करने या संरक्षण या प्रबंधन का अधिकार है। सोलिगा आदिवासियों को इन अधिकारों को दिया जाना सोलिगाओ एवं उनके संगठन जिला बुदकाटू गीरिजन अभिरूध्दि संघ द्वारा २००८ से किये जा रहे सतत प्रयास का परिणाम है।

इन अधिकारों से जुड़े पट्टे जिला कमिश्नर श्री. अमर नारायण एवं विधायक पुटारंग शेट्टी द्वारा एक आयोजन में बॉटे गये। इस आयोजन में कर्नाटक वन विभाग का अनुपस्थित रहना संदेहात्मक रहा है।

स्रोत : नितिन राय, पी.एच.डी. (ईमेल : nitinrai@atree.org) फिलो, अशोका परिस्थितिक एवं पर्यावरण शोध ट्रस्ट (एट्री)

पता : रॉयल इनक्लेव, श्रीराम पुरा जाकूर, पो. बेंगलूरू – ५६००६४.

वेबसाइट : www. atree.org

२. कार्यशाला एवं सम्मेलन

विश्व से भयानक कीटनाशक इन्डोसुल्फान का चरणबध्द तरीके से अंत

अप्रैल, २०११ में जिनेवा में संबन्धित देशों के पांचवे विश्व स्तरीय सम्मेलन में, विश्व के सभी देश इस बात के लिये सहमत हुए कि हानिकारक कीटनाशकों की सूची में हानिकारक ख़तरनाक इण्डोसुल्फान को जोड़ा जाये। विश्व के पर्यावरण स्वास्थ एवं न्याय के मुद्दोंपर काम करने वाले संगठनों में जो इस हानिकारक कीटनाशक पर पाबंदी की मांग कर रहे थे, पाबंदी के फैसले का स्वागत किया है। भारत में इस कीटनाशक के प्रयोग से केरल के लोग बुरी तरह से प्रभावित हुए है। जहाँ इसका प्रयोग बहुतात से काजू की खेती में किया गया था। इसके दुष्प्रभाव से वहां के हजारो लोग न केवल मानसिक बीमारी और कैंसर से पीडित हुए बल्कि जन्मजात बीमारीयों का भी शिकार हुएँ। जयन चेलटन जो, स्वंयसेवी संगठन जनहित शोध संस्था, से जुडे है, उनका कहना है कि ''इस निर्णय की हम मांग कर रहे थे। हम इस कीटनाशक के पीडितों की माताओं की ऑख के आँसू को तो नही पोछ सकते परन्तु हम उन्हे इस बात से आश्वस्त (भरोसा) कर सकते है कि भविष्य में इस ख़तरनाक कीटनाशक का कोई शिकार नही होगा। हमे इस बात की भी खुशी है कि यह उन गरीब किसानों की जीत है जिसने यह साबित कर दिया कि यदि विश्वस्तर पर यदि लोग एकजुट हो जाये तो वो सभी चीजे ली जा सकती है जिसकी वो मांग करते है।''

अपने निरंतर गतिशीलता एवं जैवसंकलन के गुण के कारण इण्डोसुल्फान डी.डी.टी. की तरह हवा के साथ एवं समुद्री लहरों के साथ मिलकर आर्किट क्षेत्र तक पहुंच सकते है और वहां पर्यावरण एवं पारंपरिक भोजन को दूषित कर सकते है।

२०. इनको अनुसूचित जनजाति व अन्य आदिवासी (वन अधिकारों को मान्यता) अधिनियम की धारा ३ में बताया गया है। इसे वनाधिकार कानून, २००६ या एफ.आर.ए. के रूप में जाना जाता है।

इसके उपयोग करने वालो पर यह प्रतिबंध एक साल के अंदर अपने प्रभावों को बताने लगेगा परन्तु इसका अन्य फसलों से खत्म होने में छः साल से अधिक समय लगेगा। कीटनाशक पर काम करने वाले समूह से जुड़े वैज्ञानिक कार्ल टुपर का मानना है कि ''प्ले थेरा, इसका विकल्प पहले से उपलब्ध है, हमारा यह मानना है कि इसे किसी भी प्रकार की छूट निर्णय में शामिल नही की जायेगी। हम लोग विशेष प्रकार की फसलों एवं कीट के समूह को छूट देने का विरोध करते आये है। चरणबध्द तरीके से इसकी रोक में, इसका उपयोग कुछ अतिविशिष्ट परिस्थितियों में हो सकता है।''

हानिकारक कीटनाशक इण्डोसुल्फान डी.डी.टी. के समय से ही प्रयोग में है और विश्व स्तर पर इसे प्रतिबंधित करने का प्रयास कई वर्षों से चल रहा था। यह प्रतिबंध केरल राज्य के मुख्यमंत्री बी.एस. आच्युतानंदन के नेतृत्व तथा प्रभावित लोगों एवं इसके प्रतिबंध के लिये एवं प्रभावित लोगों के अधिकार के लिये काम करने वाले लोगो के प्रयास का परिणाम है।

स्रोत : इस लेख को पी.ए.एन. अंतर्राष्ट्रीय, ए.सी.ए.टी., आई.आई.टी.सी. एवं आइ.पी.ई.एन. की प्रेस विज्ञति, २९ अप्रैल २०११ से लिया गया है। (http:// www.panap.net/en/p/post/pesticide/691)

३. विषय अध्ययन

स्थानीय बीजों की सुरक्षा के लिये लोक पंचायत द्वारा आंदोलन की शुरूआत

महाराष्ट्र के अहमद नगर जिले के संगमनेर तालुका में १९९३ में पड़े भयानक सुखे से प्रभावित गाँव में लोक पंचायत नाम के सामाजिक संगठन ने ग्रामीण विकास की सतत एवं सामेकित विकास की अवधारणा पर काम करने का संकल्प लिया। आदर्श गाँव बनाने के उद्देश से ग्रामीणों के सहयोग द्वारा जल संग्रह का काम शुरू किया गया। जैसे–जैसे काम आगे बढा वैसे–वैसे परिवारो से जुड़े एवं गाँव स्तर के विवाद मुद्दों के रूप में सामने आये। जल संग्रह के काम के विकास के दौरान ही जल संरक्षण, भूमि एवं जंगलों पर भी विशेष हमान दिया गया। लोगो को आशा थी कि एक बार पानी उपलब्ध हो जायेगा तो कृषि से जुड़े मुद्दे हल हो जायेंगे। ग्रामीण बीजों, उर्वरको, कीटनाशकों के लिये अभी भी व्यापारियों पर निर्भर है। दूसरी ओर उपलब्ध बीज संकरित किस्मों के थे जो स्थानीय खाद्य ज़रूरतों से मेल नही खाते थे। किसान एवं उपभोक्ता संकरित अनाजों तथा दूषित अनाजों के बुरे चक्र में फस कर रह गया था इस समस्या को हल करने के लिये लोक पंचायत द्वारा सतत कृषि को उच्च प्राथमिकता के रूप में स्थापित किया।

कृषक पंचायत का गठन

संगमनेर तालुक में परंपरागत खेती को पुनर्जिवित करने के उद्देश्य से गाँव–गाँव की यात्रा, कृषि संबंधी विषयों पर विचार–विमर्श, नुक्कड नाटक कर लोगों में ज़ागरूकता लायी गयी ताकि खेती में लगने वाली लागत कम हो सके। किसानों को इस बात के लिये प्रेरित किया गया कि वे अपनी ज़रूरतो के लिये खाद्य एवं बीज अपने घरो में तैयार करे। पुराने एवं पारंपरिक बीजो की जगह संकरित बीजों को प्रयोग में लाना शुरू हुआ। लेकिन कुछ खास महिला किसानों ने अपने को पारंपरिक बीजो से जोड़े रखा, ये महिलायें पारंपरिक बीजो का उपयोग करने के साथ–साथ अधिकता होने पर इसे बेंच भी देती है।

इन किसानों के साथ बातचीत के दौरान यह बात सामने आयी कि उनके पास पारंपरिक फसलो जैसे देवथान बाजरा, काला चावल एवं काला ज्वार के अलावा कम प्रचलित फसले जैसे बात के बारे में पारंपरिक ज्ञान था। इन सभी जानकारीयों को दस्तवेज के रूप में तैयार किया गया। विशेष किस्मों को संरक्षित करने और उन्हे जैविक तरीकों से उगाने के लिये स्थानीय बीज बैंक की स्थापना की गयी। सतत कृषि कार्यक्रम के तहत दस गाँवों में किसान पंचायत कार्यक्रम की शुरूआत की गयी जिसका मुख्य उद्देश्य कृषि जैव विविधता को संरक्षित करना था। अधिकतर स्थानीय किस्में, स्थानीय जलवायु के अनुरूप होने के साथ सही स्थान (इनसीटू) संरक्षण से जुड़ी है जिसे कार्यक्रम में किसानों की भागीदारी द्वारा पाया गया।

देवथान प्रजाति के बाजरे को तब पुनर्जिवित किया गया जब वह विलुप्ति के कगार पर था और इसको पुनर्जिवित करने में आठ साल का समय लगा। इसी प्रकार काले चावल की किस्म को पुनर्जिवित करने में किसानों को चार साल लगे। इन दोनों किस्मों के संरक्षण के प्रयासो में ७५ किसानों ने सक्रिय भूमिका निभायी। स्थानीय बीज बैंक की सहायता से ९५ फसलों की १२१ किस्मों को संरक्षित किया गया।

'इरवाद' एवं 'मालीव' कृषि पद्धतियों का संरक्षण

'इरवाद' एवं 'मालीव' पारंपरिक मिश्रित कृषि फसल व्यवस्थाओं के नाम है ये मिश्रित फसलें संगमनेर तालुका में प्रचलित थी जो कृषि जैवविविधता को संरक्षण करने में सहयता करती थी। इरवाद के तहत ज्वार, मूंगफली, मूंग तथा अन्य किस्में जैसे खुरसनी (कुल १९ प्रकार के बीज) साथ में बाजरा की मुख्य फसल आती थी। कृषि सुधारों के दौरान इस व्यवस्था को लगभग भुला दिया गया। मालवीय व्यवस्था सब्जियों की फसलों से जुड़ी थी जिसका हाल इरवाद व्यवस्था की तरह ही हुआ। इस व्यवस्था में सब्जियों की २२ किस्मों से ज़्यादा ४ से ५ गुंठा (एक गुंठा एक एकड जमीन

का चालीसवां भाग होता है) किसानों के घर के आस–पास उगायी जाती थी। दोनों पद्धतियां कृषि जैवविविधता को संरक्षित करती थी। अभी इन पद्धतियों को संगमनेर तथा अकोला तालुका के गांवो में जहाँ वर्षा आधारित कृषि होती है वहाँ पुनर्जिवित किया गया है।

पारंपरिक बीजों के वितरण के लिये बलीराज कृषक उत्पादन कंपनी का गठन

कृषि जैवविविधता के संरक्षण की दिशा में काम करते हुए १२० किस्मों के बीजो का अबतक संरक्षण किया जा चुका है। इस दौरान बाजार की माँग एवं प्रचलन को देखते हुए १८ किस्मों का चुनाव जैविक खेती के व्यवसायिक उद्देश्य की पूर्ति के लिये किया गया है।

दो साल पहले किसानों के विभिन्न संगठन ने सामूहिक रूप से कृषक पंचायत के माध्यम से अपनी कंपनी – बलीराज कृषक उत्पादन कंपनी का गठन किया। आज इस कंपनी के शेयरधारक किसानों की संख्या बढकर २१५ हो गयी है। बलीराज ट्रेड नाम के तहत विभिन्न किसानों द्वारा सामूहिक रूप से ज्वार, बाजरा चावल, मूंगफली आदि फसलो की उपज के साथ इन्हे बाजार में बेचा भी जा रहा है।

इन जैविक फसलों के बीजों के पंजीकरण कर प्रमाणीकृत करने का काम सहभागिता व्यवस्था के आधार पर तीन गांवो के समूह द्वारा किया जाता है। भौगोलिक सूचकांक (चिन्ह) (कानूनी) पाने के लिये तथा किसानों के हितों की रक्षा करने के उद्देश्य से भी प्रयास किये जा रहे है। इस तरह कृषक पंचायत किसानों की जीविका के लिये जो कृषि जैवविविधता संरक्षण के द्वारा सतत के सिध्दांत पर आधारित है कार्य कर रहे है।

सहभाग : इस लेख को विजय प्रताप सामबरे के सहयोग से तैयार किया गया है जिसका अनुवाद अनुराधा अर्जुनवाडकर द्वारा किया गया है। (email : lokpanchayatsnr@gmail.com).
पता : ८, तुलसी कांम्पलेक्स, कुरान रोड, संगमनेर ब्लाक, संगमनेर,
जिला : अहमदनगर ४२२६०५
फोन : ०२४५५–२२७१३४ २२७२३४. फॅक्स : ०२४२५–२२७१३४.
Email : lokpanchayatsnr@gmail.com
वेबसाइट : http:// www.lokpanchayat.org

वनस्त्री : मलांद, वन–बाग एवं बीज संग्राहक संगठन

वनस्त्री, मलांद वन–बाग एवं बीज संग्राहक संगठन पारंपरिक बीजों संरक्षण के माध्यम से वन–बाग जैवविविधता एवं खाद्य सुरक्षा के क्षेत्र में कार्यरत एक संस्था है। वनस्त्री का कार्यालय सिरसी शहर में स्थित है परन्तु इसके सदस्य मंलेन्दु (पश्चिमी घाट के पर्वतीय क्षेत्र) संकरे तटीय क्षेत्र तथा पूर्वी घाट के किनारे पर फैले है। इस संगठन की स्थापना २००१ में पारंपरिक बीजों के आपसी आदान–प्रदान के उद्देश्य से विभिन्न समूहों द्वारा संयुक्त रूप से किया गया था ताकि जैवविविधता को संरक्षित किया जा सके। २००८ वह समय है जब संगठन ने संरक्षण से जुड़े कार्यों के द्वारा सतत एवं स्थायी जीविकाओ को बढावा देना शुरू किया। इस संगठन मुख्य उद्देश्य है –

१. खेतों एवं बागों में वन कृषि एवं जैवविविधता को संरक्षित करना।
२. पारंपरिक फसलों के बीजों का संग्रह एवं संरक्षण को बढावा देना और
३. संपर्क, प्रशिक्षण एवं सेवाओं को उपलब्ध कराना।

वनस्त्री के उद्देश्य वैश्वीकरण (ग्लोबलाइजेशन) के दौर में आर्थिक स्थायित्व एवं क्षेत्र के छोटे, पारंपरिक खाद्य उत्पादन व्यवस्था से जुड़ी चिंताओ से प्रेरित है। संगठन वनगृह (घर) बागोम को जैवविविधता के विकल्प, पोषक (स्वस्थ) भोजन, अतिरिक्त आमदनी का स्त्रोत तथा शिक्षा देने वाला मानती है।

कन्नड भाषा में वनस्त्री का अर्थ ''जंगल की औरत'' है जो महिलाओं के संरक्षण में पारंपरिक भूमिका पर जोर देती है। वनस्त्री का मानना है कि किसी भी जैवविविधता संरक्षण कार्यक्रमों जिसका उद्देश्य अनुवांशिक क्षरण (अपक्षय) को रोकना है, उन कार्यक्रमों में महिलाओं की भूमिका बीच बचाने वाली तथा ज्ञान के स्त्रोत के रूप में पहचानी जाना चाहिएँ।

वनगृह बाग क्या है?

वनगृह बाग आकार में छोटे से आंगन से लेकर एक एकड या इससे भी अधिक में फैला क्षेत्र होता है जिसमें घरों के आस–पास विभिन्न प्रकार की सब्जियों की मीश्रित खेती की जाती है। जगह की उपलब्धता के अनुरूप विभिन्न प्रकार के विविधता वाली सब्जीयों की ज़रूरतो को ध्यान में रखकर की जाती है। इस प्रकार की सब्जियों की खेती में – अमरंठ, पालक, ककडी/खीरा, कद्दू, भिंडी, बैंगन, मिर्च, आदि की उपज की जाती है।

अबतक का काम

१. फूलों की ६० एवं सब्जियों की १२० प्रजाति को सूचिबध्द किया गया।
२. जैविक एवं खुले में तैयार किये गये बीजों के ६००० पैकेट बांटे गये।
३. २००१ से अबतक १३ जैवविविधता मेला का आयोजन किया गया।
४. विभिन्न जातियों, समुदायो, धर्मो एवं आर्थिक वर्ग की महिलाओं ने मेलों में हिस्सा लिया तथा आपस में बीजों का आदान–प्रदान किया।
५. गोवा के वास्को में उम्मीद का बाग की स्थापना लाउडरी में काम करने वाले लोगो के साथ मिलकर किया गया।

अन्य कार्य

१. एक क्षेत्रीय विकेंद्रीकृत बीज बैंक का गठन
२. सामूहिक रूप से सदस्यों द्वारा गृह आधारित संरक्षण कार्यो एवं सेवाओं को चलाने में लोगों का सहयोग.

समापन : वनस्त्री का मुख्य कार्य बीज के आदान–प्रदान समूह एवं दस्तावेजीकरण का है। इसके अलावा संगठन, प्रशिक्षण, संपर्क एवं संरक्षण आधारित कार्यो को स्थापित करने में सहायता देती है। यह लेख सुनीता राव (email: vanastree@gmail.com) द्वारा दिया गया है।

पता : ८०/१ असरे विशाल नगर, मराठी कोपा

फोन : ०८३८४–२३३२९३

वेबसाइट : www.vanastree.org

४. अंतर्राष्ट्रीय समाचार

इथोपिया के गंबेला जंगल में भारतीय कंपनी ने जमीन का पट्टा (लीज) हासिल किया

ऐसे में जबकि खाद्य संसाधन लगातार घटते जा रहे है तथा वैश्विक स्तर पर खाद्य पदार्थों की बढती मांग के चलते इनकी कीमतें लगातार बढ रही है और अस्थिर है। भविष्य की ज़रूरतों को पूरा करने के लिये कई देश अपने देश के बाहर अन्य देशों में विकल्प की तलाश कर रहे है। भारत भी यूरोपीय एवं मध्य–पूर्वी देशो की तरह अपने देश के बाहर विकल्प की तलाश कर रहा है। भारत की सबसे बड़ी कंपनी करथूरी ग्लोबल ने अफ्रिका में लीज पर जमीन हासिल की है। कंपनी ने पहले चरण में एक लाख हेक्टेयर और दूसरे चरण में २ लाख हेक्टेयर जमीन पामोलीन तेल, चावल एवं दालों की खेती के लिये २० बिर्र प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष (लगभग १.४ यू.एस.डी.) की दर से हासिल की है। इतनी कम कीमत ने केवल इथोपिया को आश्चर्यचकित किया बल्कि करथूरी भी आश्चर्य में है। कम कीमत के कारण कंपनी और ज़्यादा जमीन लीज में लेने की इच्छा रखती है जो की उसकी वास्तविक ज़रूरतो से ज़्यादा है।

अन्य कंपनियो जैसे रूचि सोया, सनांती एग्रो फर्म इंटरप्राइज एवं एस एण्ड वी संलूशन, व्हाइट फील्ड कॉटन फर्म, बी.एच.ओ. बायो तथा सी.एल.सी. इंड्स्ट्रीज ने भी इस देश में १०,००० से ५०,००० हेक्टेयर जमीन लीज पर ली है। करथूरी और वेदांता ने अपने कार्यालय को गंबोला जंगलो के गंबोला राष्ट्रीय पार्क में स्थापित किया है जो इथोपिया का महत्त्वपूर्ण जैवविविधता वाला क्षेत्र है।

स्थानीय लोग गंबोला के जंगल को कथूरीस्तान कहने लगे है। (मान चित्र देखें)

कंपनी ने जिस जमीन को लीज पर लिया है वह जमीन कंपनी और इथोपिया सरकार के अधिकारियों ने गैर कृषि उपज संरक्षित एवं अनुपजाऊ बताया है। जबकि स्थानीय लोग ऐसा नही मानते है, वो लोग इस जमीन का उपयोग शिकार, मधुमक्खी पालन, जल तथा इंधन को एकत्र करने एवं छोटे स्तर पर कृषि करने मे करते है। पर्यावरणीय दृष्टिसे किसी जमीने को अनुपयोगी नही कहा जा सकता जबकि वह जल का स्त्रोत, जैवविविधता, जलवायु सुरक्षा एवं अध्यात्मिक उद्देश्यों से जुड़ी हो। जबकि, संरक्षित कृषि भूमि की व्यवस्था ने स्थापित स्थानीय भूमि आधारित संबंधो एवं कार्यों को जो कि विविधता वाले है को दबाने का काम किया है। इन संबंधों एवं कार्यों को सुरक्षित एवं उपयोगी बनाने के लिये गंभीर प्रयास नही किये गये है ताकि इनका भविष्य में उपयोग हो सके। माना जाता है कि ये आर्थिक विकास की ज़रूरतों के लिये

उपयुक्त नही है तथा जिम्मेदार कृषि निवेश का फायदा इन तक नही पहुंचा है।

कुछ लोगो के हाथ में कृषि के लिये जमीन का लीज देने से न केवल उनके अधिकार में शक्ति एवं धन का स्त्रोत होगा बल्कि उस जमीन में रहने वाले मजेगंर, अनोक एवं नुएर समुदाय के लोगो के विस्थापन के साथ जैवविविधता एवं संस्कृति को भी नुकसान पहुंचेगा। जो कीमत दी जाती है वह पारंपरिक ज्ञान को छोड़ने के लिये भी होती है जबकि पारंपरिक ज्ञान, समुदाय की नियंत्रण एवं सुरक्षा करने की क्षमताओं के लिये आवश्यक है जिसका उपयोग वो अपनी भूमि एवं क्षेत्र के लिये कर सकते है।

मजेगंर के लोगो ने वेदांता के सामने यह पक्ष रखा है कि उनके क्षेत्र में जंगलों का विनाश का लोगो, आवास, जंगली जीवो एवं पानी पर कभी ठीक न होने वाले गंभीर प्रभाव होगा। इथोपिया के राष्ट्रपति ने भारत के प्रधानमंत्री को वेदांता द्वारा की जा रही कपास की खेती से जल स्त्रोतों पर पड़ने वाली गंभीर समस्या की चेतावनी के विषय में पत्र भी लिखा है। सभी चिंताओं की अनदेखी करते हुए वेदांता ने लीज पर हस्ताक्षर कर दिया है। गंबेला में १९९० से बाढ का गंभीर प्रभाव पड़ा है। बाढ की इस समस्या का कारण उच्च भूमि में जंगलों का विनाश एवं वृक्षारोपण (कृषि आधारित) को लाना है। जिससे पर्यावरण में लचीलापन आया है। इस दौरान करथूरी ने बाजरा के ३०,००० एकड़ क्षेत्र को खोया है या नुकसान उठाना पड़ा है। जब 'बारो' तथा 'अत्तरो' नदियों की बाढ ने करथूरी के ८० किमी. लम्बे तटबंध को तोड़ दिया। इस बाढ से कई स्थानीय लोगो को प्रभावित किया जिनकी भूमि की उत्पादक्ता बड़े स्तर पर प्रभावित हुई है। साई रामकृष्ण कथूरी का कहना था कि बाढ से कंपनी को १५ मिलियन डालर का नुकसान हुआ है। और वो आपदा के स्वरूप से हैरान थे – ''इस तरह की बाढ हमने पहले नही देखी. पानी की मात्रा आश्चर्य वाली थी।''

सहयोग : यह लेख डॉ. इंग्रिड हार्टमन द्वारा दिया गया (email : ingrideflio@yahoo.com) आप शोधार्थी एवं सलहाकर है जिन्हे जर्मनी तथा हार्न ऑफ अफ्रिका (अफ्रिकी क्षेत्र) में २० वर्षों का अनुभव है। पूर्व में आप आमुड़ विश्व विद्यालय, सोमाली लैंड़ से जुडी थी एवं वर्तमान में डिसर्ट इंटरनेशनल से जुड़ी है।
वेबसाइट : http:// www. European-desertnet.eu/

शोक

राज्यसभा सदस्य, शिक्षा विद एवं पद्मश्री डॉ. रामदयाल मुंडा का निधन ७२ वर्ष की उम्र में ३० सितम्बर, २०११ को रांची में हुआ था। आदिवासी मुद्दों के विशेषज्ञ डॉ. मुंडा की झारखंड राज्य के गठन में सक्रिय भूमिका रही थी। आपको भारतीय आदिवासियों पर मानवीय शोध के लिये अंतर्राष्ट्रीय सम्मान प्राप्त था।

डॉ. मुंडा आदिवासियों के विकास के साथ उनकी संस्कृति एवं संगीत के विकास के लिये समर्पित होने के साथ संगीतकार, बहुभाषी, लेखक, विद्वान, संस्था निर्माता के रूप में जाने जाते थे। आप राष्ट्रीयस्तर पर, पूरे देश की विभिन्न आदिवासी समुदायों की एकता, उनकी आवाज तथा लक्ष्य के केंद्र थे। आपने संयुक्तराष्ट्र संघ के पारंपरिक समुदाय पर कार्यकारी समूह के जिनेवा तथा पारंपरिक मुद्दों के समूह के न्यूयार्क में भारत के पारंपरिक एवं आदिवासी संगठन के अधिकारी के रूप में सक्रिय नीति बनाने में हिस्सा लिया। आप भूरिया समिति के सदस्य थे जिसने पिछडे क्षेत्रों में पंचायत के विकास का प्रस्ताव दिया जिसे पी.ई.एस.ए. (पीसा) के रूप में जाना जाता है। डॉ. मुंडा, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की अध्यक्षा सोनिया गांधी की नेतृत्व वाली राष्ट्रीय सलाहकार समिति के सदस्य भी थे।

आंध्र प्रदेश के सहज समृद्ध नामक संघटन के किसानों द्वारा आयोजित किये हुएं प्रदर्शन में रखे हुएं धान के टिले।

समुदाय व संरक्षण : समुदाय आधारित जैवविविधता संरक्षण तथा आजीविका सुरक्षा – विशेषांक ... कृषि में जैवविविधता

अंक ४, नं. १, दिसंबर २०११
संपादक : मिलिन्द वाणी
परामर्श व भाषा संपादन : नीमा पाठक
संपादकीय सहयोग और अनुवाद : अनुराधा अर्जुनवाड़कर, विकल सामदरीया
फोटो : शालिनी भुतानी, कांची कोहली
चित्रांकन : मधुवंती अनंतराजन, राम चंद्रन
प्रकाशक : कल्पवृक्ष, अपार्टमेंट ५ श्री दत्त कृपा, ९०८ ड़ेक्कन जिमखाना, पुणे 411 004
फोन : 91-20-25675450 फोन/फॅक्स : 91-20-25654239 ईमेल : kvoutreach@gmail.com
वेबसाइट : www.kalpavriksh.org
आर्थिक सहयोग : मिजेरिओर

निजी वितरण के लिये
प्रकाशित विषयवस्तु (Printed matter)
सेवा में,